Welfare State

बीसवीं शताब्दी के पूर्व राज्य का कार्य केवल कानून और व्यवस्था
कायम रखना तथा विदेशी शत्रुओं से रक्षा करना माना जाता था। इस
प्रकार उस समय पुलिस राज्य की कल्पना की जाती थी तथा राज्य
की महानता की परीक्षा उसकी शक्ति-सम्पन्नता के आधार पर की
जाती थी। परन्तु बीसवीं शताब्दी में लोकहितकारी राज्य का
विचार जोर पकड़ता गया और सभी प्रकार के शासन प्रणा-
-लियों वाले राज्य अपनी अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपने
को लोकहितकारी बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं।
की कल्पना अतिप्राचीन है तथापि इसका यद्यपि लोकहितकारी राज्य
रूप आज के राज्यों में देखने को मिलता है। व्यवहारिक तथा पूर्ण
शास्त्र के जनक अरस्तु भी लोककल्याणकारी राज्य की पाश्चात्य राजनीति-
कल्पना का विचार करते हुए कहते हैं कि राज्य जीवन अर्थात
भौतिक सुख के लिए अस्तित्व में आया तथा उसका अस्तित्व
अच्छे जीवन अर्थात नैतिक जीवन के लिए है।
को बल नहीं मिला मध्ययुग सामन्तवादी युग होने के कारण इस विच
Kant, Bentham की विचारधाराओं में पुनः किन्तु 18 वीं व 19वीं शताब्दी में Gree
-पादन मिलता है। इस आदर्श का प्रति-
जाता है कि लोककल्याणकारी राज्य से सामान्यतया यह आशय लगाय
कहलाता है। परन्तु लोकहितकारी कार्य वाला राज्य लोककल्याणकारी राज्य
जाती है तो उसका तात्पर्य राजनीतिशास्त्र में जब लोकहित की बात की
व्यक्ति हित नहीं होता है साधारणतः लगाया जाने वाला
होते हैं। अतः सब की साधना प्रत्येक व्यक्ति के हित पृथक पृथक
ऐसा सम्भव नहीं है। लोकहित राज्य पृथक-पृथक कर
से तात्पर्य लोकहितकारी राज्य के रूप में 'लोकहित'
व्यक्ति के अवसर की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से
आवश्यकताओं की असमानता को दूर कर उसकी साधारण
व्यवस्था करता है। Kant के अनुसार
वह राज्य कल्याणकारी होता है जो अपने नागरिकों के लि
व्यापक समाज सेवाओं की व्यवस्था करता है। इन समाज
सेवाओं के अनेक रूप होते हैं। इनके अन्तर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य
बेरोजगारी तथा वृद्धावस्था में पेंशन आदि की व्यवस्था
होती है। इसका उद्देश्य नागरिकों को सभी प्रकार से सुरक्षा
करना होता है।" इस प्रकार लोककल्याणकारी राज्य में
राज्य द्वारा व्यक्तियों को दिया गया सहयोग दान-स्वरूप
ना होकर अधिकार स्वरूप होता है। लोककल्याणकारी राज्य

राज्य नागरिकों के चिन्तन में परिवर्तन की अपेक्षा करता है।
नागरिकों को कोई भी कार्य समाज के हित को ध्यान में रख
-कर करना चाहिए। उन्हें यह अनुभव करना चाहिए कि वे भी
समाज के एक अंग हैं तथा उन्हें समाज के हित के लिए
कार्य करना चाहिए है। किसी व्यक्ति के कार्य से यदि
सम्पूर्ण समाज का अहित होता है, तो निश्चय ही समाज
का अंग होने के कारण उस व्यक्ति का भी अहित होगा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लोकहित-
-कारी राज्य का मुख्य उद्देश्य व्यक्तियों की आर्थिक सुरक्षा
राजनीतिक सुरक्षा तथा सामाजिक सुरक्षा की रक्षा करना है।

1. आर्थिक सुरक्षा- व्यक्ति की आर्थिक हित की सुरक्षा करना लोक-
कल्याणकारी राज्य का सर्वप्रथम उद्देश्य है। आर्थिक हित-साधन
के अभाव में राजनीतिक हित साधना का कोई महत्व नहीं है।
इतिहास यह बताता है कि शासन का स्वरूप कोई भी रहा
राजनीतिक शक्ति उन लोगों के हाथों में केन्द्रित हो जाती है
जो आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली होते हैं। अतः राजनैतिक
शक्ति को जन-साधारण में निहित करने के लिए यह आवश्यक
है कि व्यक्तियों के एक न्यूनतम आर्थिक स्तर की प्राप्ति
की व्यवस्था की जाए। लोक कल्याणकारी राज्य में किसी
व्यक्ति के लिए आर्थिक साधनों की अधिकता होने की
पूर्व सब व्यक्तियों के लिए उनकी पर्याप्तता होना
अनिवार्य है। यद्यपि आय की समानता न तो सम्भव है
और ना ही वांछनीय ~~है~~ है तथापि प्रत्येक व्यक्ति को
minimum Economic standard अवश्य मिले।

2. राजनीतिक सुरक्षा— लोककल्याणकारी राज्य का यह
उद्देश्य है कि वह व्यक्ति को राजनीतिक सुरक्षा प्रदान करे
जिससे व्यक्ति स्वयं राज्य के लोकहितकारी कार्य में सहयोग
दे सके और सामान्य हित में अपनी योग्यता की वृद्धि करने
में सहायक हो सके। इसका तात्पर्य यह है कि यद्यपि व्यक्ति
को चाहिए कि अपना आचरण सामान्य हित इच्छा के अनुरूप
रखे और अपने को उसके अधीन माने। ~~यद्यपि~~ तथापि उसे इस
बात की स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वह उस सामान्य
इच्छा के निर्माण के विचार-अभिव्यक्ति, प्रचार तथा
वैधानिक विरोध द्वारा अपना सहयोग दे सके। लोकहित
लोकहित की साधना किसी फासीवादी अथवा साम्यवादी

जैसे अधिनायकवादी राज्य में भी हो सकती है। रूस एवं चीन जैसे साम्यवादी देशों में व्यापक लोकहित का साधना हो भी रहा है, फिर भी सच्चाई यह है कि आर्थिक सुरक्षा की वेदी पर व्यक्ति को अपनी राजनैतिक सुरक्षा का बलिदान करना पड़ता है। लोकहितकारी प्रजातन्त्र लोकहितकारी साम्यवाद से उत्तम है क्योंकि साम्यवाद में व्यक्ति के केवल आर्थिक और सामाजिक हित को प्रधानता दी जाती है, जबकि प्रजातन्त्र में राजनैतिक, बौद्धिक आदि अन्य प्रकार के हितों की साधना भी उतनी ही महत्वपूर्ण समझी जाती है। प्रजातन्त्रीय समाज तथा शासन सामान्य लोकनीति पर आधारित होता है। अतः इसमें लोकहित पर आधारित बहुमत को अपने विचारों एवं नीतियों को राजनीय कार्यों का आधार बनाने का अधिकार प्राप्त होता है उसमें अल्पमत को भी शान्तिपूर्ण विधियों से लोकहित के आधार पर अपने को बहुमत में परिवर्तित करके सरकार बनाने का अधिकार रहता है। वह निश्चय ही लोकहित की दृष्टि से उस फासिस्टवादी अथवा साम्यवादी अधिनायकतन्त्र से उत्तम होता है, जिसमें बहुमत के साथ मतभेद को विद्रोह समझा जाता है और उसका परिणाम मतभेद रखने वाले का अपमान, मृत्युदण्ड या दण्ड तक हो सकता है।

इस प्रकार राजनैतिक लोकहित की साधना के बिना लोकहितकारी राज्य केवल उसी प्रकार का हो सकता है, जिस प्रकार बिना आत्मा के शरीर होता है।

– सामाजिक सुरक्षा – लोककल्याणकारी राज्य का उद्देश्य नागरिकों की सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था करना भी है। लोककल्याणकारी राज्य को चाहिए कि वह जाति, वंश, अथवा रंग आदि को दूर करे तथा सब प्रकार के व्यक्तिगत भेदों को दूर करके समाज में समानता उत्पन्न करे। प्रत्येक व्यक्ति को जो समाज में जन्म लेता है, जीवन सम्बन्धी सुख का बलिदान अन्य के सुख के लिए नहीं किया जा सकता और न ही किसी व्यक्ति को अन्य से कम महत्वपूर्ण समझा जा सकता है। लोकहितकारी राज्य अपने कानूनों तथा संस्थाओं द्वारा व्यक्ति के लिए कानून सम्बन्धी समानता तथा अपनी उन्नति के अवसर सम्बन्धी समानता की व्यवस्था

करें। यही सामाजिक समानता के लिए अपेक्षित है।

लोककल्याणकारी धारणा का उदय कुछ मुख्य प्रवृत्तियों का परिणाम है। 19 वीं शताब्दी में व्यक्तिवादी वि-रकों ने राज्य के कार्यक्षेत्र को काफी संकुचित कर दिया। व्यक्तिवादियों ने राज्य को एक आवश्यक बुराई माना त मनुष्य के अधिकार को प्रधानता दी। उनके अनुसार प्रत्ये व्यक्ति यह निर्णय स्वतः लेने में सक्षम है कि उसे लिए क्या अच्छा है। इस विचारधारा का परिणाम यह हुआ कि प्रतियोगिता का युग शुरू हुआ जहां वही व्यक्ति टिक सकता था जो कि आर्थिक दृष्टि या अन्य दृष्टि से भी सक्षम था। (survival of the fittest). इसी विचारधारा के प्रतिक्रिया स्वरूप लोककल्याणकारी राज्य की कल्पना राजनीतिशास्त्रियों ने की।

व्यक्तिवादी विचारधारा ने समाज में दो वर्गों को जन्म दिया — पूंजीपति वर्ग और मजदूर वर्ग। पूंजीपतियों द्वारा श्रमिकों का शोषण किया गया। सरकार भी इन पूंजीपतिय के हाथों में सिमट गई तथा उन पूंजी के वास्तविक उत्पादकों के लिए जीवन निर्वाह करना कठिन हो गया। पूंजीपतियों द्वारा श्रमिकों के शोषण के विरुद्ध आवाज उठने ल यह विचारधारा जोर पकड़ने लगी कि सभी प्रकार के उत्पाद का श्रेय उन ~~अगी~~ अगणित व्यक्तियों का होना है, जो वस्तुतः कारखानों तथा खेतों में काम करते हैं। अतः जो उत्पाद होता है, उसका उपयोग उन थोड़े से मालिकों द्वारा न होकर मजदूरों द्वारा होना चाहिए। इस शोषण प्रधान व्यवस्था के लि तत्कालीन राजकीय अवस्था को उत्तरदायी ठहराया गया ~~और~~ तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को बदलने के लिए यह आव-श्यक समझा गया कि राज्य का वर्तमान पूंजीवादी स्वरूप ब बदला जाए और उसे लोककल्याणकारी बनाया जाए।

मार्क्स और एंगेल्स की वैज्ञानिक समाजवाद की विचारधारा ने भी लोकहितकारी राज्य के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मार्क्स के अनुसार उत्पादन के वास्तविक आधा श्रमिक होते हैं, अतः उत्पादन का लाभ पूंजीपतियों को न मिलकर श्रमिकों को मिलना चाहिए। इस विचारधारा का क्रियात्मक रूप सर्वप्रथम रूस में देखने को मिला, जहां 1917 की महान क्रांति ने जार के अत्याचारी शासन का अंत कर दिया।

बादशाही के स्थान पर श्रमिकों ने एक ऐसे अधिनायकत्व
का उदय हुआ जिसने विरोधी लोगों का निर्दयतापूर्वक दमन
करते हुए सबके लिए आर्थिक सुरक्षा और वर्गविहीन वर्गहीनता
पर आधारित समाज की स्थापना की।

-कल्याणकारी लोकतन्त्र तथा मताधिकार के विस्तार ने भी लोक
-कल्याणकारी राज्य की स्थापना में अहम् भूमिका निभायी। 19वीं
शताब्दी के अंत तक जहाँ भी लोकतंत्र थे, वहाँ मताधिकार बड़ा
सीमित था। अतः जनता के बहुत बड़े भाग की आवाज शासन
में नहीं थी और राज्य द्वारा पिछड़े वर्गों के हितों की उपेक्षा
की जा सकती थी सन् 1832 के ब्रिटेन में सुधार अधिनियमों
द्वारा मताधिकार बढ़ा और उसके बाद 20वीं शताब्दी के
भारत आदि अधिकांश राज्यों में भी मताधिकार को व्यापक बना
दिया गया। जब अधिकांश जनता को शासन में समान प्रतिनिधित्व
का अवसर मिला तो उनके हितों की उपेक्षा किया जाना असम्भव
रहा। फलतः राज्य के लिए यह आवश्यक हो गया कि पिछड़े
वर्गों की स्थिति सुधारने के लिए वह अपने को लोककल्याणकारी
बनावे जिससे जनता को राजनीतिक क्षेत्र के अतिरिक्त
सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में भी समानता मिल सके।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद लोकहितकारी राज्य
का विचार राष्ट्रीय न होकर अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है।
अपनी समृद्धि को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि
पड़ोसी भी समृद्ध रहें, अन्यथा अपनी समृद्धि को भी खतरा
बना रहता है। इसी प्रकार विश्व में और दरिद्रता रहते हुए
कोई राष्ट्र विशेष यह सोचे कि वह समृद्धि को
सकता है अथवा राष्ट्रों के हितों के बलिदान पर अपना
हित साधन कर सकता है, तो यह असम्भव है। राष्ट्रीय
लोकहित की भावना को स्थायी बनाने के लिए यह आवश्यक
है कि किसी राष्ट्रविशेष के हित साधन के साथ अन्त-
-राष्ट्रीय हित साधना का भी ध्यान रखा जाए और
विभिन्न राष्ट्रों में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक प्रतिस्पर्धा के
स्थान पर पारस्परिक सहयोग एवं सह-अस्तित्व को बढ़ाया जाए। केवल
राष्ट्रीय स्तर पर लोकहितकारी की बात करना तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर
पर प्रतिस्पर्धा के वश में होकर किसी व्यवस्था को केवल इस आधार पर
कि वह इस देश का व्यवस्था नहीं है, को मार देना लोकहितकारी राज्य सिद्धान्त
के आदर्शों के विरुद्ध है। इसी कारण के एक लक्ष्य को आदर्श यथार्थ
में परिणत करके ही लोकहितकारी राज्य का आदर्श साकार हो पायेगा।